शिक्षा का अधिकार : एक विश्लेषण

प्रदीप कुमार सिंह *

शिक्षा का अधिकार अधिनियम लागू करके सरकार ने बहुत ही साहसिक और सराहनीय कार्य किया है। लेकिन इसके मार्ग में बहुत ही चुनौतियाँ हैं, जैसे– गरीबी या निर्धनता, रूढ़िवादी सामाजिक परिवेश, वित्तीय समस्या, गुणवत्ता की कमी, ड्रॉप आउट आदि। इन चुनौतियों को दूर किए बिना शिक्षा के अधिकार अधिनियम के उद्देश्यों अर्थात देश में 6 से 14 वर्ष तक के सभी बच्चों को सार्वभौमिक, अनिवार्य और निःशुल्क शिक्षा उपलब्ध कराना कठिन होगा। तमाम प्रयासों के बाद अभी भी इस आयु वर्ग के लगभग 92 लाख बच्चे स्कूल से बाहर हैं। अतः इसकी सफलता के लिए सरकारी प्रयास के साथ-साथ सामाजिक सहभागिता तथा अभिभावकों का सहयोग भी आवश्यक है।

राज्य का यह नैतिक दायित्व होता है कि वह अपने सभी नागरिकों के लिए उचित शिक्षा की व्यवस्था करे। विशेष रूप से भारत जैसे लोकतांत्रिक देश में लोकतांत्रिक मूल्यों के विकास की दृष्टि से यह अनिवार्य हो जाता है। इस दृष्टि से हाल ही में भारतीय संसद द्वारा शिक्षा को मौलिक अधिकार (6-14 वर्ष के बच्चों के लिए) बनाया जाना सराहनीय कदम है।

बसु (1992) के अनुसार भारतीय संविधान के अनुच्छेद 45 में उल्लेख किया गया है कि राज्य 6-14 वर्ष तक के सभी बच्चों को संविधान लागू होने के 10 वर्षों के भीतर निःशुल्क एवं अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा उपलब्ध कराएगा। लेकिन शिक्षा को मौलिक अधिकार बनाने एवं 6-14 वर्ष तक के सभी बच्चों को निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा को कानूनी रूप देने में भारत सरकार को 60 वर्ष लग गए तो इसे व्यवहार रूप में परिणत करने में कितना समय लगेगा यह चिन्ता का विषय है। प्रस्तुत लेख में इन्हीं बिंदुओं पर विचार किया गया है।

*15-एम.एम.आई.जी., ए.डी.ए. कॉलोनी, म्योराबाद, इलाहाबाद, उत्तर प्रदेश-211002

शिक्षा के अधिकार का तात्पर्य

यहाँ शिक्षा के अधिकार का तात्पर्य देश के सभी (6–14 वर्ष तक के) बच्चों को नि:शुल्क एवं अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा प्राप्त करने के कानूनी अधिकार से है।

नि:शुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा के लिए किए गए प्रयास एवं वर्तमान स्थिति

नि:शुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा के सार्वभौमीकरण की दिशा में समय-समय पर सरकार द्वारा प्रयास किए गए हैं। शिक्षा का अधिकार विधेयक संसद द्वारा 2009 में पारित किया गया जो 1 अप्रैल 2010 से लागू हो गया है। उच्चतम न्यायालय ने 1993 में उन्नीकृष्णन मामले में फैसला देते हुए 0–14 वर्ष तक के सभी बच्चों के लिए मुफ्त अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा को मौलिक अधिकार घोषित किया। लेकिन उस समय शिक्षा को मौलिक अधिकार नहीं बनाया जा सका। इसके अलावा वर्तमान कानून के अनुसार 0–6 वर्ष तक के बच्चों को इस कानून के दायरे में न लाया जाना इस आयु वर्ग के साथ धोखा है।

(सिंह 2004)

सन् 2000–01 में भारत सरकार के मानव संसाधन विकास मंत्रालय द्वारा 6–14 वर्ष तक के सभी बच्चों को नि:शुल्क एवं अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा उपलब्ध कराने के लिए सर्वशिक्षा अभियान नामक योजना चलायी गई। इसका प्रमुख उद्देश्य 6–14 वर्ष तक के सभी बच्चों को कम-से-कम 8 वर्ष तक की स्कूली शिक्षा उपलब्ध कराना है। इस अभियान का लक्ष्य 2003 तक सभी बच्चों को स्कूल में नामांकन कराना, वर्ष 2007 तक सभी बच्चों द्वारा पाँच वर्ष की शिक्षा सम्पन्न करना तथा 2010 तक सभी बच्चों द्वारा 8 वर्ष की प्राथमिक शिक्षा सम्पन्न करना है। सन् 2010 बीत चुका है लेकिन सर्वशिक्षा अभियान लक्ष्य पूर्ति होने तक जारी रहेगा। कागजी खाना-पूर्ति के बाद भी 6–14 वर्ष तक के लगभग 22 करोड़ बच्चों में से लगभग 92 लाख बच्चे अभी भी स्कूल से बाहर हैं।

नवम्बर 2002 में 93वें संविधान संशोधन द्वारा अनुच्छेद 21 में 6–14 वर्ष तक के बच्चों के लिए शिक्षा को मूलाधिकार के रूप में प्रतिस्थापित किया गया। इसके अलावा अनुच्छेद 51(1) में एक और मौलिक कर्तव्य जोड़कर माता-पिता के लिए अपने बच्चों को शिक्षा देना कर्तव्य बताया गया। इसलिए भारतीय संसद द्वारा शिक्षा का अधिकार अधिनियम-2009 पारित किया गया है। इसके तहत निजी स्कूलों को भी गरीबी रेखा से नीचे जीवन-यापन करने वाले 25 प्रतिशत बच्चों को अनिवार्य रूप से दाखिला देना होगा। इसका संपूर्ण खर्च सरकार वहन करेगी।

6–14 वर्ष तक के बच्चों को प्राथमिक शिक्षा उपलब्ध कराने के लिए कुछ योजनाएँ पहले से देश एवं प्रदेश स्तर पर चल रही हैं जैसे–राष्ट्रीय साक्षरता मिशन (1988), बिहार शिक्षा परियोजना (1991-92, बिहार), लोक जुम्बिश (1992, राजस्थान), स्कूल चलो अभियान (उ.प्र.), जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम (1994 से देश के 242 जिलों में), मीड डे मील योजना (1995 से देश के 14 राज्यों में), तथा राष्ट्रीय प्राथमिक शिक्षा मिशन (1995) आदि। इन तमाम

प्रयासों एवं कार्यक्रमों को चलाए जाने के बावजूद अभी भी पूर्ण सफलता नहीं मिल सकी है। देश के 6–14 आयु वर्ग के 22 करोड़ बच्चों में से अभी भी 92 लाख बच्चे स्कूल से बाहर हैं।

(दैनिक जागरण, अप्रैल 2010)

लेकिन सबसे सुखद पक्ष यह है कि धीरे–धीरे ही सही हम लक्ष्य के करीब पहुँच रहे हैं। जहाँ मार्च 2003 में 2.49 करोड़ बच्चे स्कूल से बाहर थे, वहीं मार्च 2005 में यह संख्या घटकर 1.35 करोड़ रह गई जो कि अब लगभग 92 लाख रह गई है। यदि ये आंकड़े सत्य हों तो भी कुछ अन्य पहलू शंका उत्पन्न करते हैं। लगभग 20 प्रतिशत बच्चे कक्षा एक से दो के बीच पढ़ाई छोड़ देते हैं। ड्रॉप आउट का यह औसत अन्य दूसरी कक्षाओं की तुलना में सबसे ज़्यादा है।

(दैनिक जागरण, मार्च 2006)

इसका वास्तविक कारण कक्षा एक में बच्चों का फर्ज़ी नामांकन दिखाया जाना है। जो भी हो यह देश की असफलता ही कही जाएगी कि हम अपने शत–प्रतिशत बच्चों को 62–63 वर्षों से आज़ाद होने के बावजूद नामांकन नही करा सके और शिक्षा को सभी बच्चों (6–14 वर्ष) का मौलिक अधिकार बनाने में इतना समय लग गया।

इसके अलावा प्राथमिक शिक्षा में गुणवत्ता का अभाव चिंता का विषय है। वर्तमान उपराष्ट्रपति माननीय हामिद अंसारी के अनुसार प्रारंभिक शिक्षा में पढ़ाई की विषयवस्तु, उसकी गुणवत्ता और उसके नतीजे अब भी अहम मसले हैं। बड़ा सवाल यह है कि स्कूलों में पढ़ाने वाले शिक्षक कैसे हैं? क्या वे प्रशिक्षित हैं? क्या और कैसे पढ़ाया जा रहा है? शिक्षकों व विद्यार्थियों का अनुपात क्या है?

(दैनिक जागरण, नवम्बर 2010)

शिक्षा का अधिकार कानून

शिक्षा को सभी बच्चों का मौलिक अधिकार बनाने वाला कानून 'शिक्षा अधिकार अधिनियम –2009' 1 अप्रैल 2010 से लागू हो गया है। इस कानून के तहत 6–14 वर्ष आयु वर्ग के सभी बच्चों को नि:शुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा का हक मिल गया है। यह कानून इस कार्य को सुनिश्चित करने के लिए स्थानीय और राज्य सरकारों पर बाध्यकारी होगा। इस कानून के तहत बच्चों को स्कूल फ़ीस, स्कूल ड्रेस, किताबों, यातायात एवं मीड डे मील आदि का खर्च नहीं देना पड़ेगा। बच्चों को अगली कक्षा में जाने से नहीं रोका जायेगा। कोई स्कूल बच्चे का प्रवेश लेने से मना नहीं कर सकता। प्रत्येक 60 बच्चों पर कम से कम दो अध्यापक होंगे। इसके तहत निजी स्कूलों को गरीबी रेखा से नीचे जीवन–यापन करने वाले 25 प्रतिशत बच्चों को दाखिला देना अनिवार्य होगा। इसका खर्च सरकार वहन करेगी।

शिक्षा अधिकार अधिनियम–2009 के अनुसार कक्षा 1 से कक्षा 5 तक न्यूनतम 200 व कक्षा 6–8 तक न्यूनतम 220 कार्यदिवस अनिवार्य हैं, फिलहाल 180 से अधिक कार्यदिवस नहीं हो पाते हैं। पहली से पाँचवी तक के बच्चों को एक सत्र में 800 घंटे व 6–8 तक के बच्चों को न्यूनतम 1000 घंटे अध्यापन अनिवार्य होगा। वर्तमान में इसकी सीमा 700 से 850 घंटे तक

ही है। इस प्रकार शिक्षकों को सप्ताह में न्यूनतम 48 घंटे कार्य करना होगा जबकि वर्तमान में उन्हें सप्ताह में 36 घंटे कार्य करना होता है। इस कानून में 1 से 5 तक के बच्चों को एक कि. मी. के दायरे में तथा कक्षा 6 से 8 तक के बच्चों के लिए तीन कि.मी. के दायरे में स्कूल उपलब्ध कराने की व्यवस्था दी गई है। शिक्षा का अधिकार कानून को लागू करने में जो खर्च आएगा उसे केंद्र व राज्य सरकारें 55:45 के अनुपात में वहन करेंगी। इसमें केंद्र सरकार ने अपना योगदान 55 से बढ़ाकर 65 प्रतिशत कर दिया है।

शिक्षा के अधिकार कानून की चुनौतियाँ

शिक्षा के अधिकार कानून की राह चुनौतियों से परिपूर्ण है। इसे व्यावहारिक रूप से लागू करने में कठिनाई है लेकिन यदि सरकार की नीयत साफ़ है तो असंभव नहीं है। सरकार का यह कदम सराहनीय है क्योंकि आज़ादी के 62 सालों बाद भी सरकार कम-से-कम इस तरफ़ कदम उठाने का साहस तो कर सकी। शिक्षा के अधिकार कानून को सफल बनाने के लिए इसके मार्ग की कुछ निम्नलिखित चुनौतियों से निपटना होगा–

1. शिक्षा नीति में बदलाव या परिवर्तन

हमारी मौजूदा शिक्षा नीति शिक्षा के अधिकार कानून में अवरोध पैदा करेगी। वर्तमान शिक्षा पद्धति में कई तरह के विद्यालय समानांतर रूप से चल रहे हैं जैसे परिषदीय विद्यालय, अर्द्धसरकारी प्राथमिक विद्यालय, नगर निगम के विद्यालय एवं निजी प्राथमिक विद्यालय। लेकिन जो भारतीय समाज है वह सामाजिक दृष्टि से स्तरीकृत है। दूसरी तरफ हम शैक्षिक समानता भी लाना चाहते हैं परंतु हमारी शिक्षा पद्धति अमीरों के लिए अलग विद्यालय एवं गरीबों के लिए अलग विद्यालय की पद्धति पर चल रही है। ऐसे में यहाँ दोहरा मापदंड दिखाई देता है। अमीरों के बच्चे प्रतिष्ठित निजी विद्यालयों में दाखिला पा लेते हैं जबकि गरीबों के बच्चों को वहाँ ठहरने नहीं दिया जाता है क्योंकि उनके माता-पिता आर्थिक एवं सामाजिक दृष्टि से कमज़ोर होते हैं। हालांकि इस कानून में निजी विद्यालयों को आर्थिक रूप से कमज़ोर 25 प्रतिशत बच्चों का दाखिला करने के लिए व्यवस्था दी गई है लेकिन इसके खिलाफ़ निजी शिक्षण संस्थाओं के संगठन ने सुप्रीम कोर्ट में याचिका दायर की है और उनकी याचिका स्वीकार भी कर ली गई है।

(दैनिक जागरण, अप्रैल 2010)

यदि उपर्युक्त 25 प्रतिशत बच्चों को निजी विद्यालयों में दाखिला मिल भी जाता है तो भी उन्हें सामाजिक-आर्थिक दृष्टि से पिछड़े होने के कारण विद्यालयी वातावरण में सामंजस्य बैठाने में कठिनाई होगी और ड्रॉप-आउट की समस्याएँ बढ़ेंगी। प्राथमिक शिक्षा में ही अनुसूचित जाति के 52 प्रतिशत से अधिक और अनुसूचित जनजाति के 63 प्रतिशत से अधिक बच्चे बीच में ही पढ़ाई छोड़ देते हैं।

(दैनिक जागरण, नवम्बर 2010)

उपर्युक्त समस्या का एक ही समाधान हो सकता है कि सरकार शिक्षा नीति में बदलाव करते हुए कोठारी आयोग (1964-1966) के सुझावों के अनुसार समान विद्यालयी पद्धति को

अपनाए। इससे प्राथमिक शिक्षा के सार्वभौमिकरण में अप्रत्याशित लाभ होने की संभावना बढ़ जायेगी।

2. गरीबी या निर्धनता

शिक्षा के अधिकार कानून की दूसरी चुनौती गरीबी या निर्धनता है। जब तक निर्धनता दूर नहीं होगी तब तक इस कानून की सफलता संदेहास्पद रहेगी। अभी भी लगभग 30 प्रतिशत भारतीय गरीबी रेखा से नीचे जीवन-यापन करते हैं और इसका भी निर्धारण बहुत ही उदारवादी मापदंडों पर किया गया है। इन निर्धनों या गरीबों को अगले वक्त की रोटी की चिंता होती है, ये बच्चों को स्कूल भेजना पसंद नहीं करते विशेषकर लड़कियों को। इनके बच्चे अपने छोटे भाई-बहनों को संभालते हैं अथवा अपने माता-पिता के काम में हाथ बटाते हैं। ऐसे अधिकांश अभिभावकों की शिक्षा के प्रति अभिरुचि ऋणात्मक होती है। वे शिक्षा को सामाजिक परिवर्तन का कारक नहीं मानते। वे शिक्षा की मँहगाई देखकर पहले ही हताश हो जाते हैं। हालांकि मिड डे मील योजना से दाखिले एवं ड्रॉप-आउट में लाभ मिला है। इसके अलावा निःशुल्क ड्रेस, किताबों एवं वज़ीफे से भी नामांकन में बढ़ोतरी हुई है। लेकिन ये स्थाई लाभ प्रदर्शित नहीं करते। दोपहर के भोजन से एक टाइम खाने की व्यवस्था हो जाती है लेकिन दूसरे टाइम की चिंता बनी रहती है।

उपर्युक्त चुनौती से निपटने के लिए गरीबी का उन्मूलन करना होगा। तब शत-प्रतिशत नामांकन एवं ठहराव का लक्ष्य प्राप्त किया जा सकेगा और बच्चों को शिक्षा का मौलिक अधिकार प्राप्त हो पायेगा।

3. सामाजिक परिवेश

भारतीय समाज मूलतः बंद, रूढ़िवादी एवं परंपरावादी समाज रहा है। समाज जाति, धर्म एवं समुदायों में बँटा है, साक्षरता दर कम है, बहुसंख्यक लोग रूढ़ियों एवं परम्पराओं से बंधे हुए हैं। ऐसे में विद्यालयों का पहले से स्तरीकृत होना आग में घी का काम करता है। बहुत से परिवार ऐसे हैं जो लड़कियों को स्कूल भेजने में भेदभाव करते हैं। इसका सर्वप्रमुख कारण अज्ञानता है। ये रूढ़िवादी व परंपरावादी तत्व शिक्षा के अधिकार कानून के लिए चुनौतीपूर्ण हैं। डॉ. सिंह (2003) के अनुसार 'आज की तारीख में भारत में दो तिहाई निरक्षर लड़कियाँ हैं। इनमें भी अनुसूचित जाति, जनजाति और मुस्लिम समुदाय में लड़कियों में साक्षरता का प्रतिशत बहुत कम है।'

अतः शिक्षा के अधिकार को सफल बनाने के लिए जनसामान्य को विशेष रूप से अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, पिछड़े वर्गों एवं मुस्लिम समुदाय के लोगों को बालिकाओं को स्कूल भेजने के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए तथा अज्ञानता एवं रूढ़िवादिता को दूर करने के लिए विशेष प्रशिक्षण शिविरों का आयोजन किया जाना चाहिए।

4. वित्तीय समस्या

शिक्षा के कानून को लागू करने के लिए वित्तीय संसाधनों को उपलब्ध कराना भी बहुत बड़ी चुनौती है। कोठारी आयोग (1964-1966) ने अपने रिपोर्ट में देश के सकल घरेलू उत्पाद का 6 प्रतिशत शिक्षा पर खर्च करने के लिए सिफ़ारिश की थी। इसके 44 वर्षों बाद भी हम सकल

घरेलू उत्पाद का लगभग 3 प्रतिशत ही शिक्षा पर खर्च कर पाए हैं। ऐसी स्थिति में भारत सरकार को इसके लिए आवश्यक वित्तीय ज़रूरतों को पूरा करने वाले वित्तीय स्रोतों को पहले से चिह्नित कर लिया जाना चाहिए था। शिक्षा का अधिकार कानून के अंतर्गत केंद्र और राज्यों के बीच 55:45 के अनुपात में वित्तीय भार वहन करने का प्रस्ताव है लेकिन बिहार, उ.प्र., मध्य प्रदेश और कर्नाटक जैसे राज्यों की तरफ़ से सीमित संसाधनों का हवाला देते हुए सौ फीसदी केंद्रीय मदद की माँग की गई है।

(दैनिक जागरण, अप्रैल 2010)

हालांकि इसे बढ़ाकर 65:35 के अनुपात में कर दिया गया है। उपर्युक्त चुनौती से निपटने के लिए भारत सरकार को नये वित्तीय स्रोतों को तलाशना होगा और नया फार्मूला निकालना होगा।

5. फर्ज़ी आंकड़े

शिक्षा का अधिकार कानून को सफल बनाने के लिए फर्ज़ी आंकड़ों से सावधान रहना होगा। मीड डे मील योजना का खर्च एवं वजीफ़ा की रकम हड़पने के लिए फर्ज़ी नामांकन दिखाया जाता है। सर्वशिक्षा अभियान के अंतर्गत 2003 तक सार्वभौम नामांकन का लक्ष्य रखा गया था। इस दबाब के कारण बहुत बड़ी संख्या में फर्ज़ी नामांकन कक्षा एक में दिखाया गया। इन्हीं कारणों से 2006 में कक्षा एक से दो के बीच ड्रॉप आउट 20 प्रतिशत था।

(दैनिक जागरण, मार्च 2006)

अत: गलतफहमी से बचने के लिए यह आवश्यक है कि आंकड़ों की विश्वनीयता की जाँच के बिना उन्हें सत्य न माना जाए।

6. गुणवत्ता की कमी

सरकार जिन सरकारी प्राथमिक विद्यालयों के बलबूते शिक्षा के अधिकार कानून को लागू करना चाहती है उनमें गुणात्मकता की कमी है, आवश्यक उपकरणों का अभाव है एवं ये आकर्षक नहीं हैं। यही कारण है कि हाल के वर्षों में निजी प्राथमिक विद्यालयों की संख्या एवं प्रभाव में वृद्धि हुई है। इन निजी प्राथमिक विद्यालयों ने शैक्षिक असमानता को भरपूर बढ़ावा दिया है। सरकारी प्राथमिक विद्यालयों में शिक्षक-विद्यार्थी अनुपात बहुत ज्यादा है। कहीं एक ही अध्यापक है, कहीं एक शिक्षा मित्र के सहारे विद्यालय चल रहा है, कहीं कक्षा एक से पांच तक की पढ़ाई एक ही साथ एक ही अध्यापक द्वारा चलाई जा रही है तथा इण्टरमीडिएट उत्तीर्ण शिक्षामित्रों (उ.प्र.) से शिक्षण कार्य कराया जा रहा है। ऐसे में एम.एल.एल. (MLL) की बात सोचनी भी बेमानी है। विद्यालयों में शौचालयों का अभाव है, कमरों में श्यामपट्ट की हालत खस्ता है।

अत: गुणात्मकता की कमी एवं सुविधाओं का अभाव शिक्षा के अधिकार कानून में अवरोध पैदा करेगा क्योंकि इससे ड्रॉप-आउट की समस्या बढ़ेगी। अत: प्राथमिक विद्यालयों की शिक्षा की गुणवत्ता में वृद्धि एवं विद्यालयीय सुविधाओं की उपलब्धता सुनिश्चित कराई जानी चाहिए।

7. ड्रॉप आउट (बीच में पढ़ाई छोड़ना)

सरकार खुश है कि 6 से 14 वर्ष तक के लगभग 97 प्रतिशत बच्चे पढ़ाई करने लगे हैं। लेकिन एक सच्चाई यह भी है कि प्रारंभिक शिक्षा में लगभग 43 प्रतिशत बच्चे बीच में ही

पढ़ाई छोड़ देते हैं। उ.प्र., बिहार और राजस्थान जैसे बड़े राज्यों में तो स्थिति यह है कि अनुसूचित जाति के 50 प्रतिशत से अधिक बच्चे प्राइमरी के ऊपर नहीं पढ़ पाते।

(दैनिक जागरण, नवम्बर 2010)

यह समस्या शिक्षा के अधिकार कानून के लिए सबसे बड़ी चुनौती है। यदि 97 प्रतिशत स्कूल जाने वाले बच्चों में से 43 प्रतिशत बीच में पढ़ाई छोड़ने वाले बच्चों को घटा दिया जाए तो स्थिति कितनी दयनीय है इसका अंदाज़ा लगाया जा सकता है।

अत: इस कानून की सफलता के लिए ड्रॉप आउट के कारकों (निर्धनता, सामाजिक भेदभाव, जेंडर आधारित असमानता, विद्यालयी कठोरताओं आदि) को दूर करना होगा।

निष्कर्ष

निष्कर्षत: शिक्षा का अधिकार कानून देर से ही सही सराहनीय कदम है। लेकिन इसकी सफलता सरकारी प्रयास के साथ-ही-साथ निजी सेक्टर के सहयोग एवं सामाजिक सहभागिता पर निर्भर करेगी। अत: हमारा नैतिक दायित्व है कि हम इस पुनीत कार्य में इकाई के रूप में सहयोग करते हुए सामूहिकता की ओर बढ़ें और प्राथमिक शिक्षा के सार्वभौमिकरण के लक्ष्यों को प्राप्त करने में सहयोग करें। तभी देश को 2020 तक विकसित देशों की श्रेणी में लाने का लक्ष्य प्राप्त किया जा सकेगा।

संदर्भ

बसु, डी.डी., 1992, *भारत की सांविधानिक विधि,* प्रेंटिस हाल ऑफ इण्डिया प्राइवेट लिमिटेड, नयी दिल्ली।

दैनिक जागरण, 2006, कक्षा एक के बाद 20 प्रतिशत बच्चे क्यों छोड़ देते पढ़ाई, 30 म ार्च, इलाहाबाद।

दैनिक जागरण, 2010, आज श्रीगणेश, 1 अप्रैल, इलाहाबाद।

दैनिक जागरण, 2010, शिक्षा का अधिकार कानून के खिलाफ दो और याचिकाएँ मंजूर, 13 अप्रैल, इलाहाबाद।

शिक्षा आयोग प्रतिवेदन, 1966, मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार (शिक्षा मंत्रालय), नयी दिल्ली।

दैनिक जागरण, 2010, राज्यों के तेवर से दबाव में केंद्र, 7 अप्रैल, इलाहाबाद।

सिंह, पी.के., 2004, *प्राथमिक शिक्षा का सार्वभौमिकरण, भारतीय आधुनिक शिक्षा*, एन.सी.ई.आर.टी., नयी दिल्ली, अक्तूबर, पृ. 29-30

दैनिक जागरण, 2010, उपराष्ट्रपति ने उठाए शिक्षा की बदहाली पर सवाल, 12 नवंबर, इलाहाबाद।